International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 11 Issue 12 December. 2022 || PP. 126-128

भारतीय संगीत और वाद्य यंत्र

डॉ0 प्रभा वार्ष्णेय
श्री टीकाराम डिग्री कॉलेज, अलीगढ़

भारतीय संगीत में वाद्यों का वि ोश महत्व है वाद्यों के बिना गायन, वादन, नृत्य की सुन्दरता अधखिली कली के समान होता है। गायन वादन नृत्य ये तीनों ही कलाऐं वाद्यों की संगति पाकर पूर्ण विकसित फूल की भॉति खिल जाती हैं। गायन वादन नृत्य में ही नहीं बल्कि नाट्य के क्षेत्र में वाद्यों का वि ोश महत्व है। जैसा कि भरत मुनि ने कहा है सर्वप्रथम नाटकों में वाद्यों का वादन करना चाहिए, क्योंकि वाद्य वादन नाटक की भौया है। गीत और वाद्य का उचित प्रयोग होने से नाटक की भाोभा दुगनी हो जाती है।

वाद्य भाब्द का भााब्दिक अर्थ है बजाने योग्य यंत्र। यह भाब्द वद् धातु में यत् प्रत्यय लगाने से बना है। यदि हम इन वाद्यों की ध्वनि सुनें तो वाद्यों में हमें स्वरों तथा उसमें पिरोये हुये भाब्दों का उच्चारण भी सुनाई देता है और यही वाद्य यंत्रों की सफलता की कसौटी है। अन्तर केवल इतना है कि गायन में हमें भाब्दरूपी मोती स्पश्ट सुनाई देते हैं, जबकि वाद्यों की ध्वनि में भाब्दों का आभास नहीं होता। हम कह सकते हैं कि आन्तरिक भावों व अनुभूतियों को संगीतात्मक ध्वनि, लय एव बोलों के माध्यम से प्रकट करने वाले उपकरण वाद्य कहलाते हैं और संगीत में लगने वाले समय की गति को मापने वाले यंत्र वि ोश ताल वाद्य कहलाते हैं।

नाद महासागर भी भॉति भारतीय वाद्यों की संख्या भी अनन्त है। भारतीय वाद्य संगीत में वाद्यों के वर्गीकरण इतिहास को प्राचीनतम कहना अति योक्ति नहीं होगी। वाद्यों की हजारों वर्श प्राचीन समृद्ध परम्परा का अनुमान हम प्राचीन ग्रन्थों तथा उसके समय के प्रचलित वाद्यों से कर सकते हैं। उक्तकाल में भारतीय वाद्यों के स्वरूप अत्यधिक परिश्कृत, वैज्ञानिक तथा समृद्ध थे।

सर्वप्रथम वैदिककाल में हमें सगीत वाद्यों का वर्णन उपलब्ध होता है। यद्यपि यह वर्णन संक्षिप्त है परन्तु इससे प्रमाणित होता है कि उक्तकाल में चतुर्विध वाद्यों का विकास हो चुका था। सामगान में ताल की संगति के लिये प्रारम्भ में दुन्दभी नाम के चर्म वाद्यों का प्रयोग होता था।

संगीत के आदिकाल से ही हमारे यहाँ विविध प्रकार के वाद्ययंत्रों की परंपरा चली आ रही है। वैदिक साहित्य में वेणु, दुंदुभि, भेरी आदि अनेक वाद्ययंत्रों का उल्लेख मिलता है। ताल व स्वर, दोनों के लिए अनेक प्रकार के वाद्ययंत्रों की सृश्टि वैदिक काल में ही हो चुकी थी। आर्यो ने अपनी रूचि एवं मति के आधार पर कलात्मक विविध वाद्ययंत्रों की नीव ही नहीं डाली, वरन् उनका उपयोग कर मानव जीवन को भौतिक धरातल से ऊँचा उठाकर कला के दिव्य तथा अलौकिक जगत् में ले जाकर प्रतिश्ठित कर दिया।। 'आयाती', 'आडंबर', 'भूमि–दुंदुभि' आदि अनेक प्रकार के वाद्ययंत्र वैदिककालीन संगीत में प्रयुक्त होते थे। 'रामायण' तथा 'महाभारत' में भी इस बात का प्रमाण मिलता है। उस समय के संगीत में 'मृदंग', 'मुरली', 'पणव' एवं अनेक प्रकार की 'वीणा' आदि के प्रयोग का उल्लेख मिलता है। लव और कु ा का वीणा–वादन, रावण का 'मृदंग', 'वीणा' व 'चीत्कारा' (चिकारा) – वादन सभी को ज्ञात है। भगवान् श्री कृश्ण की वं ाी तो वि वमोहिनी बन ही चुकी थी। युद्ध के समय भिन्न–भिन्न प्रकार के वाद्ययंत्रों को बजाने का उल्लेख 'महाभारत' के अनेक स्थलों पर हुआ है।

यद्यपि 'रामायण' और 'महाभारत' के समय में अनेक–वाद्ययंत्रों का प्रयोग हमारे संगीत में होता था, किंतु फिर भी उस समय के पूरे वाद्ययंत्रों की जानकारी हमें प्राप्त नहीं होती। संगीत के वाद्ययंत्रों के संबंध में यदि कहीं हमें व्यवस्थित विवरण मिलता है तो वह है भरतमुनि–कृत 'नाट्य ाास्त्र' में। 'नाट्य ाास्त्र' का प्रमुख विशय नाटक है, किंतु नाटक से संबंध रखनेवाली अन्य विद्याओं और कलाओं का विचार भी इस ग्रंथ में भली भांति किया गया है। 'संगीत' नाटक का अभिन्न अंग है, इसलिए इस ग्रंथ में गीत, वाद्य और नृत्य –तीनों का विधिवत् वर्णन किया गया है। 'नाट्य ाास्त्र' के अट्ठाईसवें अध्याय में वाद्ययंत्रों का वर्णन किया गया है, जिसका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :–

'नाट्य ाास्त्र' के अट्ठाईसवें अध्याय में चार प्रकार के वाद्ययंत्र बताए हैं – 'ततं चैवानद्धं च घनं सुशिरमेव च'। अर्थात–1. तत, 2. अवनद्ध, 3. घन व 4. सुशिर – इन चारों प्रकार के वाद्यों के लक्षण भी इसी अध्याय में दिए गए हैं।

तार के बने वाद्यों को 'तत वाद्य' कहा गया है। वीणा, तंबूरा आदि तत वाद्य हैं। चमड़े से मढे हुए ताल–वाद्ययंत्रों को 'अवनद्ध वाद्य कहा गया है। मृदंग, पुश्कर आदि वाद्य इसी कोटि में आते हैं। काँसे, पीपत आदि धातु के वाद्ययंत्रों को 'धन वाद्य' कहा गया। इन बाजों को 'ताल–वाद्य' कहने की प्रथा थी। प्राचीन पुस्तकों में धन जाति के वाद्यों को ताल–बाद्ययंत्र' भी कहा गया है। इस श्रेणी में झाँझ, मँजीरा, घंटा आदि वाद्य आते हैं। वायु के संयोग से बजने वाले वाद्यों को 'सुशिर वाद्य' कहा गया। इस कक्षा में वं ाी, भाहनाई आदि वाद्य आते हैं।

भरत मुनि ने संपूर्ण वाद्यों के चार वर्ग बना दिए हैं। इन वर्गो में विभाजन का आधार यह पदार्थ है, जिसके माध्यम से ध्वनि उत्पन्न होती है। तार से, चमड़े से, धातु से या वायु से ध्वनि उत्पन्न होने के कारण सम्पूर्ण वाद्यों को चार वर्गो में रख दिया गया है। इस वर्गीकरण में जो वैज्ञानिकता है, वह आज के वैज्ञानिकों को भी चुनौती है। आज का विद्यार्थी प्रत्येक विशय को विज्ञान के माध्यम से देखता है। भरत के वाद्ययंत्रों के चार वर्ग इस आधार पर हैं कि इनके अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार के वाद्ययंत्र हो ही नहीं सकते। भरत का यह वर्गीकरण इतना वैज्ञानिक हुआ कि भरत के सभी परवर्ती लेखकों ने इसी वर्गीकरण को माना है। इस वर्गीकरण की वैज्ञानिकता तथा सरलता के कारण आज तक कोई नया वर्गीकरण वि ोश प्रचलित नहीं हुआ।

'संगीत – रत्नाकर' के छठे अध्याय में भी वाद्यों को चार वर्गो में ही बाँटा गया है। वाद्ययंत्रों का विवरण देते हुए आलंकारिक मंगलाचरण में पं0 भाारंगदेव ने कहा है:–

ततं येनावनद्धं च भुवनं निजमायया।
आनंदघनध्येतिनं ब्रह्मस्सुशिरे हरिम्।।

इस भलोक की ई वर की प्रार्थना के साथ–साथ चार प्रकार के वाद्यों का स्पश्ट उल्लेख है। यहाँ पूर्णरूपेण भरत का अनुकरण–मात्र है। केवल अंतर इतना ही है कि भरत की अपेक्षा भाारंगदेव ने वाद्यों की सूची बहुत बड़ी कर दी है। इसके अतिरिक्त अनेक वाद्यों के स्वरूप, वादन–विधि और उसमें काम आने वाले पदार्थों का भी उल्लेख किया है। वादकों के गुण–दोश, वादन क्रिया के नियम और हस्तसंचालन के अनेक विधि विधानों का सविस्तार वर्णन हमें 'संगीत–रत्नाकर' में मिलता है।

वाद्यों के वर्गीकरण के दो हजार वर्शों के इतिहास में केवल दो परिवर्तन वि ोश रूप से परिलक्षित होते हैं। इनमें से प्रथम है 'वितत' भाब्द का प्रयोग, जो 'अवनद्ध' के स्थान पर हुआ है। दूसरा है 'ततानद्ध' नाम का नया वर्गीकरण। 'वितत' भाब्द का प्रयोग तानसेन व उनके परवर्ती कलाकारों में वि ोश रूप से प्रचलित हुआ। तानसेन ने अनेक स्थानों पर 'तत', 'वितत', 'घन' एवं 'सुशिर' के नाम से वाद्यों का वर्गीकरण किया है। प्रमाण स्वरूप तानसेन–कृत 'संगीतसार' का निम्नांकित उद्धरण प्रस्तुत है:–

तत को पहले कहत है, वित दूसरो जान।
तीजो धन, चौथे सुशिर, 'तानसेन' परमान।।
तार लगे सब साज के, सो तत ही तुम मान।
चरम मढ़यो जाको मुखर, वित सु कहे बखान।।
कंस ताल के आदि दै, घन जिय मानहुँ मीत।
'तानसेन' संगीत–रस बाजत सिखर पुनीत।।

'वितत' भाब्द को लेकर इधर कुछ भ्रांतियाँ संगीत–जगत् में प्रचलित हो गई हैं। कुछ विद्वानों के मतानुसार, वितत श्रेणी के अंतर्गत वे स्वर–वाद्य आते हैं, जो गज से बजाए जाते हैं। यह मत नितांत भ्रमात्मक है। वस्तुतः 'वितत' भाब्द 'पाली' भाशा से चलकर 'प्राकृत' तथा अपभ्रं ा से होता हुआ मध्य युगीन हिंदी में आया है। तानसेन से पूर्व रचित 'संगीत–चूड़ामणि' नामक ग्रंथ में अवनद्ध वाद्यों के लिए ही 'वितत' भाब्द का प्रयोग हुआ है। उर्दू और हिंदी अलग–अलग भाशाएँ हो जाने पर हिंदी का संपर्क पुनः संस्कृत से बढ़ा तथा 'वितत' के स्थान पर पुनः 'अवनद्ध' भाब्द प्रचार में आ गया। अतः कुछ सीधे–सादे संगीतज्ञों ने भ्रमव ा इन दोनों श्रेणियों को भिन्न–भिन्न मानते हुए तत, वितत, घन, अवनद्ध एवं सुशिर–ये पाँच श्रेणियाँ वाद्यों की बना डालीं। वस्तुतः इस धारणा का कोई ठोस आधार नहीं है।

'ततानद्ध' भाब्द का प्रयोग 'संगीत–पाठ' नामक सोलहवीं भाताब्दी के बाद के ग्रंथ में प्राप्त होता है। यह ग्रंथ हस्तलिखित रूप में रामनगर के किले के 'सरस्वती–भंडार' ग्रंथालय में सुरक्षित है। कुछ इस प्रकार के वाद्यों, जिनमें चमड़ा भी प्रयुक्त हों और तार भी, के लिए इस भाब्द का प्रयोग किया गया है, जैसे मध्यकालीन 'उपंग'।

आधुनिक युग में मनुश्य का दृश्टिकोण कुछ बदल गया है। प्रत्येक पुरानी वस्तु को वह अपनी बुद्धि की कसोटी पर नए ढंग से कसना चाहता है। वाद्यों के वर्गीकरण की दि ाा में भी संगीत के कुछ आधुनिक युग के विद्धानों ने कार्य किया है, जिनमें सर्वप्रमुख स्व0 पं0 लालमणि मिश्र थे। आपने अपने भाोध–ग्रंथ 'भारतीय संगीत–वाद्य' में वाद्यों का नया वर्गीकरण प्रस्तुत किया, जो प्राचीन समय में प्रचलित वर्गीकरणों के आधार पर प्राचीन समय में प्रचलित वर्गीकरणों के आधार पर प्राचीन काल से अबतक परिवर्तित तथा कुछ नवीन वाद्यों के श्रेणी–विभाजन को दृश्टिगत रखकर किया गया है। इस वर्गीकरण में वाद्यों की छह श्रेणियाँ निर्धारित की गई हैः–

1. तत : सितार, वीणा, इसराज, तानपुरा आदि।
2. आनद्ध : तबला, ढोलक, मृदंग, खोल आदि।
3. ततानद्ध : आनंदलहरी, गुपगुपी, गोपी जंत्र आदि।
4. घन : झाँझ, मँजीरा, करताल, विजय घंट आदि।
5. सुशिर : वं ाी, भाहनाई, हारमोनियम आदि।
6. तरंग–वाद्य : जलतरंग, तबलातरंग, काश्ठतरंग आदि।

अब तक के चर्चित सभी वर्गीकरणों को ध्यानपूर्वक देखने पर ज्ञात होता है कि वाद्यों की श्रेणी के विभाजन का आधार वाद्यों के निर्माण में प्रयुक्त होने वाली सामग्री अथवा उनकी ध्वनि–उत्पादक वस्तु का भिन्न–भिन्न होना है।

स्थूलरूप से संगीत में ताल और स्वर मूल आधार हैं, अतः बाजे भी दो प्रकार के हो सकते हैं – ताल के वाद्ययंत्र तथा स्वर के वाद्ययंत्र। कुछ इस प्रकार के वाद्य यंत्र भी होते हैं, जिनमें स्वर व ताल, दोनों का समावे ा होता है। मेरे विचार से प्रयोग विधि के अनुसार वाद्ययंत्रों का वर्गीकरण इस प्रकार भी हो सकता है :–

1. ताल–वाद्य : मृदंग, ढोलक, तबला आदि।
2. स्वर–वाद्य : सितार, वीणा, सारंगी आदि।

ताल–स्वर–वाद्य : जलतरंग, नलतरंग, काश्ठतरंग आदि।

इन तीनों को पुनः ध्यान से देखने पर निम्न वर्ग और बन जाते हैं :–

ताल के बाजों में एकमुखी, द्विमुखी त्रिमुखी वाद्य भी होते हैं। कुछ वाद्य ऐसे भी होते हैं, जिनमें एक ही वाद्य के दो मुख हैं। इसके अतिरिक्त कुछ ताल–वाद्य ऐसे हैं, जिनके दो–दो भाग हैं, किंतु वादन दोनों को मिलाकर ही होता है। अतः ताल–वाद्यों के वर्ग इस प्रकार भी हो सकते हैंः–

<u>चर्म में ताल–वाद्य</u>
1. एकमुखी : खंजरी, चंग, डफ आदि।
2. द्विमुखी : डमरू, डुगडुगी, ढोल, ढोलक आदि।
3. द्विअंगी : डुग्गी , दुक्कड़, नगाड़ा, झील, तबला आदि।
4. त्रिमुखी (अथवा इससे अधिक मुख–वाले) घटम् पंचमुखम् आदि।

<u>काश्ट अथवा धातु के ताल–वाद्य</u>
1. एकांगी : जयघंट, गोंग, भेरी आदि।
2. द्विअंगी : झाँझ, मँजीरा, करताल आदि।
3. छड़ी से बनजे वाले : विजयघंट, झालर, घडियाल आदि।
4. हाथ से बजने वाले : झाँझ, मँजीरा, किन्नरी, चिमटा आदि।

स्वर के वाद्ययंत्र भी दो प्रकार के होते हैं :–
1. तार के वाद्ययंत्र,
2. वायु से ध्वनि उत्पन्न करने वाले वाद्ययंत्र।

तार से वाद्ययंत्रों को निम्न–श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता हैः–
1. खुले तार के बाजे : इन बाजों में तार को दबाकर या रगड़कर स्वरोत्पत्ति नहीं की जाती। इन वाद्यों से आधार–नाद अर्थात् 'शड्ज' की ध्वनि ही निकलती है, जैसे–तानपूरा, इकतारा आदि।

2. तार को दबाकर बजाए जाने वाले बाजे : इस प्रकार के वाद्ययंत्र वे हैं, जिनमें तार को दबाकर या रकड़कर ध्वनि उत्पन्न की जाती है, जैसे – सितार, सारंगी, वायलिन आदि।
3. डंडी से प्रहार करके बजाए जाने वाले वाद्ययंत्र : इस वर्ग के अंतर्गत संतूर आदि वाद्य आते हैं।

वायु से ध्वनि उत्पन्न करने वाले वाद्य यंत्र स्थूल रूप से दो प्रकार के हैंः–
1. मुँह से फूँककर बजाए जाने वाले वाद्य : इसके अंतर्गत वं ी, पाविका, भाहनाई आदि वाद्य आते हैं।
2. अन्य किसी साधन से वायु उत्पन्न करके बजाए जाने वाले वाद्य : इस वर्ग मे हारमोनियम, स्वरपेटी आदि वाद्य रखे जा सकते हैं।

मध्यकाल में वि व के अनेक दे ाों में इतने नए–नए वाद्यों का निर्माण हुआ है कि उन्हें वर्गीकृत करना वि व के संगीतवेत्ताओं के लिए एक कठिन समस्या बन गया है। अनेक संगीतज्ञों ने समय–समय पर इस विशय पर पर्याप्त मनन किया है, तथापि किसी वर्गीकरण को अंतिम नहीं कहा जा सकता। अपनी स्वल्प मति के माध्यम से मैंने जो वर्गीकरण वाद्यों का किया है, उसमें भारतीय ही नहीं, अपितु वि व–भर के वाद्यो को स्थूल रूप से अव य ही वर्गीकृत किया जा सकता है। वस्तुतः इस क्षेत्र में अभी पर्याप्त अनुसंधान की आव यकता है।

सन्दर्भ :–

1– भारतीय संगीत का इतिहास – डॉ भारद् चन्द्र परांजपे।
2– भारतीय संगीतज्ञ एवं संगीत ग्रन्थ–डॉ श्रद्धा मालवीय।
3– भारतीय संगीत का इतिहास – उमे ा जो ाी।
4– संगीत पत्रिकाऐं ।
5– संगीत वि ाारद – लक्ष्मी नारायण गर्ग।
6– भारतीय संगीत ि ाक्षा और उददे य – डॉ0 पूनम दत्ता।
7– उत्तर भारतीय भाास्त्रीय संगीत का विकास – डॉ0 पुश्पा चौहान।